**ओ३म्**

**‘वेदादि ग्रन्थों के अध्ययन, तर्क, विवेचना और सम्यक्**

**ज्ञान-ध्यान के बिना ईश्वर प्राप्त नहीं होता’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

संसार में किसी भी वस्तु का ज्ञान प्राप्त करना हो तो उसे देखकर व विचार कर कुछ-कुछ जाना जा सकता है। अधिक ज्ञान के लिये हमें उससे सम्बन्धित प्रामाणिक विद्वानों व उससे सम्बन्धित साहित्य की शरण लेनी पड़ती है। इसी प्रकार से ईश्वर की जब बात की जाती है तो ईश्वर आंखों से दृष्टिगोचर नहीं होता परन्तु इसके नियम व व्यवस्था को संसार में देखकर एक अदृश्य सत्ता का विचार उत्पन्न होता है। अब यदि ईश्वर की सत्ता के बारे में प्रामाणिक साहित्य मिल जाये तो उसे पढ़कर और उसे तर्क व विवेचना की तराजू में तोलकर सत्य को पर्याप्त मात्रा में जाना जा सकता है। ईश्वर का ज्ञान कराने वाली क्या कोई प्रमाणित पुस्तक इस संसार में है, यदि है तो वह कौन सी पुस्तक है? इस प्रश्न का उत्तर कोई विवेकशील मनुष्य ही दे सकता है। हमने भी इस विषय से सम्बन्धित अनेक विद्वानों के ग्रन्थों को पढ़ा है। उन पर विचार व चिन्तन भी किया है। इसका परिणाम यह हुआ कि संसार की धर्म व ईश्वर की चर्चा करने वाली पुस्तकों में सबसे अधिक प्रमाणित पुस्तक ‘‘चार वेद” ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद हैं। इसके साथ ही वेदों की अन्य टीकाओं सहित वेदों पर आधारित दर्शन एवं उपनिषद आदि ग्रन्थ भी हैं। इन ग्रन्थों वा ईश्वर के स्वरूप विषयक ग्रन्थों का वेदानुकूल भाग ही प्रमाणित सिद्ध होता है। वेद के बाद सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थों में सत्यार्थ प्रकाश व ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका प्रमुख हैं। इनकी विशेषता यह है कि इन्हें एक साधारण हिन्दी भाषा का जानने वाला व्यक्ति पढ़कर ईश्वर के सत्यस्वरूप से अधिकांशतः परिचित हो जाता है और इसके बाद केवल योग साधना द्वारा उसका साक्षात्कार करने का कार्य ही शेष रहता है।

 किसी भी मनुष्यकृत पुस्तक की सभी बातें सत्य होना सम्भव नहीं होता अतः यह कैसे स्वीकार किया जाये कि वेद में सब कुछ सत्य ही है? इसका उत्तर है कि हम संसार की रचना व व्यवस्था में पूर्णता देखते हैं। इसमें कहीं कोई कमी व त्रुटि किसी को दृष्टिगोचर नहीं होती। दूसरी ओर मनुष्यों की रचनाओं को देखने पर उनमें अपूर्णता, दोष व कमियां दृष्टिगोचर होती हैं। अतः मनुष्यों द्वारा रचित सभी पुस्तकें व ग्रन्थ अपूर्णता, अशुद्धियों, त्रुटियों व कमियों से युक्त होते हैं। इसका मुख्य कारण मुनष्यों का अल्पज्ञ, ससीम व एकदेशी होना है। यह संसार किसी एक व अधिक मनुष्यों की रचना नहीं है। सूर्य मनुष्यों ने नहीं बनाया, पृथिवी, चन्द्र व अन्य ग्रह एवं यह ब्रह्माण्ड मनुष्यों की कृति नहीं है, इसलिए कि उनमें से किसी में इसकी सामथ्र्य नहीं है। यह एक ऐसी अदृश्य सत्ता की कृति है जो सत्य, चित्त, दुःखों से सर्वथा रहित, अखण्ड आनन्द से परिपूर्ण, सर्वातिसूक्ष्म, निराकार, सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सृष्टि निर्माण के अनुभव से परिपूर्ण, जीवों के प्रति दया व कल्याण की भावना से युक्त, अनादि, अज, अमर, अजर व अभय हो। ऐसी ही सत्ता को ईश्वर नाम दिया गया है। उसी व ऐसी ही अदृश्य सत्ता से मनुष्यों को सृष्टि के आदि में ज्ञान भी प्राप्त होता है। यह ऐसा ही कि जैसे सन्तान के जन्म के बाद से माता-पिता अपनी सन्तानों को ज्ञानवान बनाने के लिए सभी उपाय करना आरम्भ कर देते हैं। यदि संसार में व्यापक उस सत्ता से आदि मनुष्यों को ज्ञान प्राप्त न हो तो फिर उस पर यह आरोप आता है कि वह पूर्ण व ज्ञान देने में समर्थ नहीं है अर्थात् उसमें अपूर्णता या कमियां हैं।

हम संसार में वेदों को देखते है और जब उसका अध्ययन कर उसकी बातों पर विचार करते हैं तो यह तथ्य सामने आता है कि वेदों की कोई बात असत्य नहीं है। वेदों की एक शिक्षा है **‘मा गृधः’** अर्थात् मनुष्यों को लालच नहीं करना चाहिये। लालच के परिणाम हम संसार में देखते हैं जो अन्ततः बुरे ही होते हैं। एक व्यक्ति धन की लालच में चोरी करता है। एक बार व कई बार वह बच सकता है, परन्तु कुछ समय बाद पकड़ा ही जाता है और उसकी समाज में दुर्दशा होती है। वह अपने परिवारजनों सहित स्वयं की दृष्टि में भी गिर जाता है। इस एक शिक्षा की ही तरह वेदों की सभी शिक्षायें सत्य एवं मनुष्यों के लिए कल्याणकारी हैं। महर्षि दयानन्द चारों वेदों व वैदिक साहित्य के अधिकारी व प्रमाणिक विद्वान थे। उन्होंने चारों वेदों की एक-एक बात पर विचार किया था और सभी को सत्य पाया था। उसके बाद ही उन्होंने घोषणा की कि वेद सृष्टि की आदि में परमात्मा के द्वारा आदि चार ऋषि अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा को दिया गया ज्ञान है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद, इन नामों से उपलब्ध मन्त्र संहितायें सभी सत्य विद्याओं की पुस्तकें हैं। इसमें परा विद्या अर्थात् आध्यात्मिक विद्यायें भी हैं और अपरा अर्थात् सांसारिक विद्यायें भी हैं। महर्षि दयानन्द की इस मान्यता को चुनौती देने की योग्यता संसार के किसी मत व मताचार्य में न तो उनके समय में थी और न ही वर्तमान में हैं। इसकी किसी एक बात को भी कोई खण्डित नहीं कर सका, अतः वेद मनुष्यकृत ज्ञान न होकर अपौरूषेय अर्थात् मनुष्येतर सत्ता से प्राप्त, ईश्वरीय ज्ञान सिद्ध हंै। इसका प्रमाण महर्षि दयानन्द व आर्य विद्वानों का किया गया वेद भाष्य एवं अन्य वैदिक साहित्य है। यह ज्ञान सृष्टि के सभी पदार्थों जिनमें पूर्णता है, उसी प्रकार से पूर्ण एवं निर्दोष है। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि संसार का कोई मत अपने मत की पुस्तक को सत्यासत्य की कसौटी पर न स्वयं ही परीक्षा करता है और न किसी को अधिकार देता है। अपनी पुस्तकों के दोषों को छिपाने के सभी ने अजीब से तर्क गढ़ लिये हैं जिससे उसके पीछे उनकी संशय वृत्ति का साक्षात् ज्ञान होता है। इसी कारण वह सत्य ज्ञान से दूर भी है और यही संसार की अधिकांश समस्याओं का कारण है।

 किसी भी वस्तु के अस्तित्व को पांच ज्ञान इन्द्रियों, मन, बुद्धि, अन्तःकरण वा आत्मा के द्वारा होने वाले ज्ञान व अनुभवों से ही जाना जाता है। यह संसार कब, किसने, कैसे व क्यों बनाया, इसका निभ्र्रान्त व युक्तियुक्त उत्तर किसी मत के विद्वान या वैज्ञानिकों के पास आज भी नहीं है। इसके अतिरिक्त चारों वेद बार-बार निश्चयात्मक उत्तर देते हुए कहते हैं कि यह सारा संसार इसको बनाने वाले ईश्वर से व्याप्त है। यह चारों वेद संसार का सबसे प्राचीन ज्ञान व पुस्तकें हैं। यह महाभारतकाल में भी थे, रामायणकाल व उससे भी पूर्व, सृष्टि के आरम्भ काल से, विद्यमान हैं। अतः वेदों की अन्तःसाक्षी और संसार को देख कर तर्क, विवेचना व ईश्वर का ध्यान करने पर ईश्वर ही वेदों के ज्ञान का दाता सिद्ध होता है। इस कसौटी को स्वीकार कर लेने पर संसार के सभी जटिल प्रश्नों के उत्तर मिल जाते हैं जिनका उल्लेख महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अपूर्व व अमर ग्रन्थ **‘सत्यार्थ प्रकाश’** में किया है।

 ईश्वर विषयक तर्क व विवेचना हम स्वयं भी कर सकते हैं और इसमें 6 वैदिक दर्शनों योग-सांख्य-वैशेषिक-वेदान्त-मीमांसा और न्याय का भी आश्रय ले सकते हैं जो वैदिक मान्यताओं को सत्य व तर्क की कसौटी पर कस कर वेदों के ज्ञान को अपौरूषेय सिद्ध करते हैं। अतः ईश्वर का अस्तित्व सत्य सिद्ध होता है। ईश्वर का अस्तित्व सिद्ध हो जाने पर संसार की उत्पत्ति की गुत्थी भी सुलझ जाती है। यदि ईश्वर है तो यह सृष्टि उसी की कृति है क्योंकि अन्य ऐसी कोई सत्ता संसार में नही है जो ईश्वर के समान हो। सृष्टि रचना का निमित्त कारण होने से प्राणीजगत, वनस्पति जगत व इसके संचालन का कार्य भी उसी से हो रहा है, यह भी ज्ञान होता है। वेदाध्ययन, दर्शन व उपनिषदों आदि वैदिक साहित्य का अध्ययन कर लेने पर जब मनुष्य ईश्वर, वेद, जीव व प्रकृति आदि विषयों का ज्ञान करता है तो ईश्वर की कृपा से इन सबका सत्य स्वरूप ध्याता व चिन्तक की आत्मा में प्रकट हो जाता है। इस ध्यान की अवस्था को योग दर्शन में समाधि कहा गया है। समाधि और कुछ नहीं अपितु वैदिक मान्यताओं को जानकर ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना में लम्बी लम्बी अवधि तक विचार मग्न रहना व इसके साथ मन का ईश्वर के अतिरिक्त किसी अन्य विषय को स्मृति में न लाना ही समाधि कहलाती है। इस स्थिति को प्राप्त करने का सभी मनुष्यों को प्रयत्न करना चाहिये। अन्य मतों में बिना तर्क व विवेचना के उस मत की पुस्तक की मान्यताओं को न, नुच के मानना ही कर्तव्य बताया जाता है जबकि वैदिक धर्म व केवल वैदिक धर्म में इस प्रकार का किंचित बन्धन नहीं लगाया गया है। साधक व उपासक को स्वतन्त्रता है कि हर प्रकार से ईश्वर के अस्तित्व को जांचे व परखे और असत्य का त्याग कर सत्य को ही ग्रहण करे।

अतः निष्कर्ष में यह कहना है कि ईश्वर के यथार्थ ज्ञान के लिए विचार व चिन्तन के साथ वेद, वैदिक साहित्य सहित सत्यार्थप्रकाश एवं ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का अध्ययन और योगाभ्यास करते हुए विचार, ध्यान, चिन्तन व उपासना कर ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है। महर्षि दयानन्द ने अनेक ग्रन्थ लिखकर यह कार्य सरल कर दिया है। स्वाध्याय के आधार पर हमारा यह भी मानना है कि वैदिक धर्मी स्वाध्यायशील आर्यसमाजी ईश्वर को जितना पूर्णता से जानता व अनुभव करता है, सम्भवतः संसार के किसी मत का व्यक्ति अनुभव नहीं कर सकता क्योंकि वहंा आधेय के लिए आधार वैदिक धर्म की तुलना में कहीं अधिक दुर्बल है। आईये, वेदाध्ययन, वैदिक साहित्य के अध्ययन, सत्यार्थप्रकाश और ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थों का बार-बार अध्ययन करने सहित योगाभ्यास का व्रत लें और जीवन के चार पुरुषार्थ धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को सिद्ध कर जीवन को सफल करें, बाद में पछताना न पड़े।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**